1 रिपोर्ट का विषय

वैश्विक वित्तीय संकट 2008 के प्रति सक्रियतावादी राजकोषीय प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय पर एक नवीकृत संकेंद्रण (फोकस) किया गया है। इन परिवर्तनों से वैश्विक स्तर पर उच्चतर राजकोषीय प्रभुत्व की आशंका बढ़ गई है, विशेष रूप से तब, जब केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय बाजारों मे सुचारू हालात कायम करने के लिए और वैश्विक संकट से प्रभावित अर्थव्यवस्थाओं में कुल मांग को प्रोत्साहित करने के लिए गैर परंपरागत मौद्रिक नीति उपायों का सहारा लिया है। भारतीय अनुभव यह दर्शाता है कि नियम-आधारित राजकोषीय विधान भले ही कम हो गये हों किन्तु राजकोषीय प्रभुत्व समाप्त नहीं हुआ है। अर्थ व्यवस्था के खुलेपन तथा सरकारी बाजार उधारों में वृद्धि से उत्पन्न बहुत बड़ी चुनौतियों के बीच राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ (इंटरफेस) के बदलते हुए गति सिद्धांतों से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र प्रबंध में लचीलापन आया है। हाल के वित्तीय संकट से प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय अनुभव को ध्यान में रखते हुए, जो कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक प्रबंधन और वित्तीय स्थिरता रखने के साथ ही साथ भारत में विशिष्ट परिस्थितियों को प्रभावित करेगा, मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय घाटे, उत्पादन अंतराल और मुद्रास्फीति अंतराल से उत्पन्न पथ के निहितार्थ पर एक व्यापक मार्गदर्शन उपलब्ध कराया गया है।

1.1 वैश्विक वित्तीय संकट के प्रभाव के पश्चात् राजकोषीय प्रभुत्व के लौटने के साथ राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का ध्यान समष्टि आर्थिक सिद्धांत और नीति व्यवहार में आकृष्ट होना जारी हैं। चूंकि राजकोषीय और मौद्रिक, दोनों ही नीतियां कुल मांग और आर्थिक क्रियाकलाप को अनुकूल बनाने के लिए संभवतः एवजी/स्थानापन्न को प्रभावित कर सकती हैं, समष्टि आर्थिक नीति-निर्माण की इन दोनों भुजाओं के बीच समन्वय आवश्यक हो जाता है। किसी केंद्रीय बैंक के लिए विस्तारकारी राजकोषीय नीतियां कुल मांग दबावों को बढ़ा कर अथवा घाटों के मुद्रीकरण की अपेक्षा द्वारा मुद्रास्फीति कारक चिंताएं बढ़ा सकती हैं। कभी-कभी बाजार वित्त से घाटों की भरपाई करना दीर्घावधि ब्याज दरों को कम रखने की राह में बाधा उपस्थित करते हुए निवेश तथा आर्थिक संवृद्धि के लिए सहायक बन जाता है। दूसरी ओर, एक कठोर मौद्रिक नीति से बाजार ब्याज दरों तथा सरकारी उधारों पर ब्याज भुगतानों में वृद्धि हो सकती है जिससे राजकोषीय घाटा बढ़ सकता है। मौद्रिक नीति का प्रभाव सिक्का-ढलाई मुनाफा तथा सरकार के मुद्रास्फीति कर राजस्व पर भी पड़ सकता है। हाल ही के दिनों में, केंद्रीय बैंकों की वित्तीय स्थिरता चिंताओं पर यूरो क्षेत्र में राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता के मुद्दे हावी हो रहे हैं। ऐसा या तो बैंकिंग प्रणाली के स्वास्थ्य पर राष्ट्रिक कर्ज की समस्या के प्रतिकूल प्रभाव द्वारा हो रहा है अथवा मौद्रिक प्रबंध पर राजकोषीय प्रभुत्व की परंपरागत चिंताओं के माध्यम से हो रहा है।

1.2 हाल के वर्षों में रिजर्व बैंक में नीति-निर्माण के संचालन हेतु राजकोषींय- मौद्रिक अंतरापृष्ठ भी एक सिद्धांत रहा है, और इस विषय पर कुछ नीति संबंधी विश्लेषणात्मक मुद्दों पर मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट (आर सी एफ) के पिछले अंक सहित बैंक के पिछले प्रकाशनों में प्रकाश डाला गया है।[1] मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट के इस अंक के लिए राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय को विषय के रूप में चुनने का निर्णय अनेक बातों पर सोच-विचार करने के बाद लिया गया है।

1.3 प्रथम, 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के प्रति सक्रियतावादी राजकोषीय प्रतिक्रिया के पश्चात्, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों ने राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता को काबू में रखने की एक अतिरिक्त चुनौती का सामना किया। ऐसी आंशका है कि केंद्रीय बैंकों द्वारा चलनिधि प्रबंधन कार्यों के संचालन का संभावित रूप से परोक्षतः सार्वजनिक कर्ज के रूप में मुद्रीकरण किया जा सकता है। यह

1 मुद्रा और वित्त संबंधी रिपोर्ट के पिछले अंकों में राजकोषीय-मौद्रिक नीति समन्वय से संबंधित जिन विभिन्न विषयों पर चर्चा की गई है, वे इस प्रकार हैः (i) भारत में राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण का इष्टतम स्तर ('इष्टतमता' की परिभाषा 5 प्रतिशत की मुद्रास्फीति दर प्राप्त करने के अनुसार की गई है) (राजवित्तीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम 2003 से पूर्व);(ii) सरकार और केंद्रीय बैंकों के बीच प्रतिपक्षी संबंध (अर्थात् क्या केंद्रीय बैंक सरकार को ओवर ड्राफ्ट/ऋण उपलब्ध कराता है अथवा क्या उसे प्राथमिक और द्वितीयक सरकारी प्रतिभूति बाजार में परिचालित करने की अनुमति है और उस सीमा तक है कि केंद्रीय बैंक के लाभ सरकार को अंतरित किये जाते हैं) और कीमत स्तर का राजकोषीय सिद्धांत; तथा (iii) सैद्धांतिक सहारा देना, 1935 से लेकर 2005 तक की अवधि के दौरान बहुराष्ट्रीय अनुभव और भारतीय अनुभव (केन्द्र और कुछ राज्यों द्वारा राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान अधिनियम और सार्वजनिक ऋण प्रबंधन तथा मौद्रिक प्रबंधन कार्यों के पृथक्करण संबंधी विषयों सहित)।

मुद्रीकरण 1970 तक की महामंदी के बाद राजकोषीय प्रभुत्व काल के दौरान व्याप्त परंपरागत प्रत्यक्ष मुद्रीकरण की सीमा से कहीं अधिक होगा। द्वितीय, भारत की ओर रुख करते हुए, यह निर्धारण करने की आवश्यकता है कि राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण को हटाने और रिज़र्व बैंक द्वारा प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में प्रत्यक्ष अभिदान की प्रथा का परित्याग करने और एक नियम आधारित राजकोषीय नीति लागू करने से क्या वास्तव में मौद्रिक नीति के संचालन में राजकोषीय प्रभुत्व कम हुआ है। तृतीय, भारत में राजकोषीय मौद्रिक समन्वय के विकसित चरणों से रिज़र्व बैंक के सामने उसके अपने तुलन पत्र प्रबंधन में नई चुनौतियां खड़ी हो गई हैं। चूंकि मौद्रिक नीति ने अपनी परिचालन क्रियाविधि मौद्रिक लक्ष्य से बदल कर बहुल संकेतक दृष्टिकोण कर दी है, उसे पूंजी प्रवाहों का प्रबंध एक अधिक खुली अर्थव्यवस्था में करना पड़ा और अपनी चलनिधि समायोजन सुविधा को सरल-सहज बनाना पड़ा। चतुर्थ, पिछले कुछ वर्षों में, जहाँ राजकोषीय घाटा और मुद्रास्फीति का स्तर काफी अधिक रहा है, संरचनात्मक तत्वों तथा ब्याज दरों-दोनों ही कारणों से निवेश कम हुआ था। इस संदर्भ में, सरकार द्वारा सितंबर 2012 से घोषित सुधार उपायों और बारहवीं योजना प्रलेख[2] में यथापरिकल्पित संवृद्धि दर बढ़ाने की अनिवार्यताओं के मद्देनज़र जहाँ समष्टि आर्थिक और वित्तीय स्थिरता बनाए रखनी होगी वहीं राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों का सावधानीपूर्वक अंशांकन (कैलीब्रेशन) करने की आवश्यकता होगी। अंततः, वैश्विक वित्तीय संकट के परिणामस्वरूप राष्ट्रिक कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक नीति और वित्तीय स्थिरता के बीच पारस्परिक क्रियाएं सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से इस बात की आवश्यकता है कि भारत में मध्यावधि पर कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्था की प्रकृति का पुनरीक्षण किया जाए।

1.4 तद्नुसार, वर्तमान रिपोर्ट का उद्देश्य विशेष रूप से हाल के पिछले दिनों में भारत में यथा विकसित राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न रूपों की जांच करना है और उसके लिए इस बात को ध्यान में रखना है कि विशेष रूप से समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण एवं नीति प्राथमिकताओं की दृष्टि से मध्यावधि पर क्या परिवर्तन संभावित है। अगले अध्याय में कुछ उन्नत और उभरते हुए बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विकास-क्रम की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है और राजकोषीय- मौद्रिक अंतरापृष्ठ के लिए हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के निहितार्थ का निर्धारण किया गया है। अध्याय 3 में इस संबंध में भारतीय अनुभव प्रस्तुत किया गया है जो इस बात को ध्यान में रखते हुए है कि पिछले दो दशकों में मौद्रिक नीति के राजकोषीय प्रभुत्व में नरमी आई है, हालांकि भारी राजकोषीय घाटे, दबी हुई मुद्रास्फीति और कर्ज गति सिद्धांतों का आरक्षित मुद्रा में डाला जाना जारी है। अध्याय 4 में मौद्रिक नीति कार्यों की व्यवस्था में बदलाव और राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के विभिन्न चरणों के अनुसार पिछले वर्षों में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में हुए उल्लेखनीय परिवर्तन की रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। अध्याय 5 में, भारत में राजकोषीय-मौद्रिक कर्ज प्रबंध समन्वय की संभावना की जांच की गई है। यह जांच विशेष रूप से वैश्विक वित्तीय संकट की पृष्ठभूमि के सम्मुख, निर्धारित राजकोषीय रोडमैप की संकट-उपरांत वापसी और कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्था पर नवीकृत विचारधारा के संदर्भ में की गई है। समापन अध्याय में, हाल के अनुभव को ध्यान में रखते हुए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर और भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के लिए कुछ मुख्य पाठों (लेसन्स) और भावी चुनौतियों की पहचान कराई गई है। विभिन्न अध्यायों में विश्लेषित मुख्य प्रश्नों के साथ अध्यायों की व्याप्ति (कवरेज) को नीचे निर्धारित किया गया है।

राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय सिद्धांत और व्यवहार में कैसे विकसित हुआ है? राजकोषीय-मौद्रिक अंतरापृष्ठ के लिए हाल के वैश्विक वित्तीय संकट के निहितार्थ क्या रहे हैं?

1.5 इन प्रश्नों पर विचार करते हुए, अध्याय 2, ''राजकोषीय-मौद्रिक समन्वयः सिद्धांत और अंतर्राष्ट्रीय अनुभव'', समष्टि आर्थिक प्रामाणिकता निर्धारित करते हुए प्रारंभ होता है। इस प्रामाणिकता ने 1930 के वर्षों में भारी मंदी के दौरान अर्थव्यवस्थाओं में कुल मांग में कमी का समाधान करने और द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् पुनर्निर्माण प्रक्रिया में सहायक होने में अग्रणी भूमिका अदा की थी। बेरोजगारी के उच्च स्तर पर मौद्रिक नीति के बेअसर होने के साथ राजकोषीय घाटों का प्रत्यक्ष मुद्रीकरण और ब्याज दरों को कम रखना निर्धारित चैनल थे जिनके द्वारा केंद्रीय बैंकों को राजकोषीय प्रभुत्व को मौन स्वीकृति देनी पड़ी। 1970 के वर्षों में उच्च मुद्रास्फीति और काफी अधिक बेरोजगारी की सहवर्तिता की अवधि के दौरान कीन्स के नीति निर्धारणों की असफलता के साथ तेल कीमत के धक्कों और बहुपक्षीय नियत विनिमय दर प्रणाली के ध्वस्त हो जाने के बीच

2 राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा यथा अनुमोदित।

मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण दृष्टिकोण अपनाकर मौद्रिक नीति स्वतंत्रता प्राप्त करनी पड़ी थी। फिर भी, मौद्रिक नीति का राजकोषीय नीति के साथ समन्वय करना होता है, विशेष रूप से ऐसे मामलों में जहाँ राजकोषीय घाटों के स्वतंत्र रूप से पूर्व निर्धारित अंतर-कालिक पथ, अनिश्चितताओं और उद्देश्यों की संख्या उपलब्ध स्वतंत्र साधनों से अधिक हो जाती है। 1990 के वर्षों में विकसित 'कीमत स्तर का राजकोषीय सिद्धांत' द्वारा प्रत्यक्ष प्रभावी कीमत स्तरों के लिए राजकोषीय नीति की अंतः शक्ति को प्रस्तुत किया गया था, जिसके द्वारा कीमत स्थिरता के मौद्रिक नीति लक्ष्य पर राजकोषीय दबाव के अन्य चैनल को पहचाना गया। विशेष रूप से, यूरोपीय मौद्रिक संघ (ई एम यू) के गठन के पश्चात्, और वित्तीय स्थिरता उद्देश्य को पूरा करने की आवश्यकता के मद्देनजर खुली अर्थव्यवस्था विस्तार ने भी, जो 2008 के पश्चात् वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अधिक स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया था, हाल के वर्षों में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के समन्वयन को समर्थन दिया है।

1.6 राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संदर्भ में चयनित उन्नत अर्थव्यवस्थाओं का अनुभव यह दर्शाता है कि 1970 के वर्षों की उच्च मुद्रास्फीति के बाद अगले दो दशकों के दौरान मौद्रिक नीति के संचालन में केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता का मुद्दा महत्वपूर्ण हो गया है। 1990 के वर्षों के दौरान, कई देशों ने मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारण अपनाया, जब कि राजकोषीय नीति वर्धमान रूप से नियम-आधारित बन गई। ये परिवर्तन मौद्रिक नीति परिचालन क्रियाविधियों में अनुरूप बदलाव में परिलक्षित हुए थे, जब कि जैसे ही राजकोषीय नियम चलन में आए, सरकारी उधारों में कमी हो गई। यू के और कुछ अन्य उन्नत देशों में कीमत स्थिरता[3] पर जोर दिये जाने के बीच 1990 के वर्षों के दौरान केंद्रीय बैंकों और सरकारों के बीच नीति समन्वयन तंत्र में आगे और सुधार हुआ है। 1990 के शुरू के वर्षो में, अनेक ओ ई सी डी देशों ने सार्वजनिक कर्ज नीति पर राजकोषीय प्राधिकरणों और केंद्रीय बैंकों के बीच परामर्श और समन्वय के लिए समितियां गठित कर ली थी । उसी समय, सरकारी कर्ज का प्रबंध करने के लिए परिचालन जिम्मेवारी अधिकांश स्वतंत्र कर्ज प्रबंधन कार्यालयों को उनके स्वयं के सुस्पष्ट उद्देश्यों के साथ सौंपी गई थी। परिचालन ढांचे का यह पुनः निर्धारण सुस्पष्ट मुद्रास्फीति अधिदेशों के साथ केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता के साथ अक्सर साथ-साथ चला। फिर भी, यह निष्कर्ष निकालना कठिन है कि 1990 के वर्षों से केंद्रीय बैंकों के अधिक स्वतंत्र बन जाने के साथ क्या वास्तव में राजकोषीय प्रभुत्व की मात्रा में उल्लेखनीय रूप से कमी हुई है। जहाँ तक ई एम डी अर्थव्यवस्थाओं का संबंध है, राजकोषीय नीति प्रभुत्व अक्सर उस महत्व का परिणाम होता था जो सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अपनी-अपनी अर्थव्यवस्थाओं के लिए उनके द्वारा निर्धारित किया जाता था। तथापि, दक्षिण अफ्रीका, भारत, ब्राजील और रूस जैसी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं ने अंततः इस बात को माना है कि मौद्रिक नीति-लक्ष्यों के अनुसरण और उनकी प्राप्ति के लिए राजकोषीय समेकन आवश्यक था। संकट की अवधि तक के लिए किये गये विश्लेषणात्मक निर्धारण से यह ज्ञात हुआ है कि राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच समन्वय तंत्र में सुधार करके उन्नत और उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं ने चक्रीय उतार-चढ़ाव से निपटने के लिए राजकोषीय और मौद्रिक-दोनों ही नीतियों का इस्तेमाल किया था।

1.7 संकट-पूर्व अवधि के दौरान अनुकूल आर्थिक और वित्तीय स्थितियों से कुछ उन्नत अर्थव्यवस्थाओं की कर्ज-वृद्धि पर पर्दा पड़ गया था जो संकट के दौरान प्रबलित हो गई थी। हाल के वित्तीय संकट से मौद्रिक नीति और राजकोषीय/कर्ज प्रबंधन नीतियों के बीच समन्वयन के बारे में कुछ परंपरागत प्रश्न प्रबलित हो गये। संकट के दौरान राजकोषीय शेष राशियों और राष्ट्रिक कर्ज का निर्माण देखा गया था। क्योंकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं और ई एम डी अर्थव्यवस्थाओं -दोनों को ही करों में कटौती और उच्चतर सार्वजनिक खर्च के अनुसार कार्रवाई करनी थी। यह स्थिति संकट के बाद की अवधि में भी जारी रही, विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में। संकट के दौरान, प्रमुख केंद्रीय बैंकों ने समंजनकारी मौद्रिक नीतियों का पालन करने के लिए अपने तुलन पत्रों का इस्तेमाल किया। संकट के पश्चात् राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय के संबंध में जो बहस उभर कर आई है वह यह है कि क्या राजकोषीय प्रभुत्व अथवा मौद्रिक प्रभुत्व हावी रहेंगे। इसकी पूरी संभावना है कि यदि राजकोषीय प्रभुत्व प्रचलित रहता है तो मौद्रिक प्रभुत्व के अंतर्गत सन्निकट ब्याज दरों को कम रखने की आवश्यकता होगी। तथापि, राजकोषीय नीति का निभाव मौद्रिक नीति द्वारा तभी तक किया जा सकता है जब तक मुद्रास्फीति अपेक्षाएं स्थिर रहती हैं। इसलिए, यह आवश्यक है कि विशेष रूप से उन्नत अर्थव्यवस्थाओं वाले देश ऐसी विश्वसनीय मध्यावधि राजकोषीय समेकन योजनाएं तैयार करें जिनसे मध्यावधि

3 हाल ही में, जनवरी 2012 में यू एस व जनवरी 2013 में जापान ने 2 प्रतिशत का निर्देशात्मक मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारित किया।

राजकोषीय निरंतरता के साथ संवृद्धि में समर्थक वसूली के लिए अल्पावधि आवश्यकताओं के बीच एक संतुलन सुनिश्चित किया जा सके। राजकोषीय प्राधिकरणों के साथ केंद्रीय बैंकों की पारस्परिक क्रिया के महत्वपूर्ण होने की संभावना है - न केवल मुद्रास्फीति अपेक्षाओं को स्थिर रखने के लिए मौद्रिक नीति के निर्बाध संचालन के दृष्टिकोण से बल्कि राष्ट्रिक कर्ज निरंतरता और वित्तीय स्थिरता के परिप्रेक्ष्य में भी। इस अध्याय में यूरो क्षेत्र में राष्ट्रिक कर्ज संकट से संबंधित ताजा चिंताओं और एक 'राजकोषीय समझौता' के माध्यम से बजटीय अनुशासन लागू करने के लिए परिकल्पित नियमों के एक सेट को अपनाते हुए यूरोपीय मौद्रिक संघ (ई एम यू) के आर्थिक स्तंभ को सुदृढ़ बनाने, आर्थिक नीतियों के समन्वयन को मजबूती प्रदान करने और यूरो क्षेत्र में शासन सुधारने के लिए किये जा रहे प्रयासों का विशेष रूप से उल्लेख किया गया है।

क्या भारत में मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) के बाद कम हुआ है? क्या विधान से घाटों का मुद्रीकरण बंद हो गया है? क्या भारत में बड़े राजकोषीय घाटे मुद्रास्फीतिकारी हैं? क्या सरकारी खर्च यथाचक्रीय अथवा प्रतिचक्रीय है? क्या कर्ज घाटा गति सिद्धांत मौद्रिक नीति पर प्रभाव डालता है?

1.8 अध्याय 3, 'भारत में राजकोषीय-मौद्रिक समन्वयः एक निर्धारण' में, जो भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के लिए संस्थागत व्यवस्था मे परिवर्तन के माध्यम से राजकोषीय-मौद्रिक समन्वय का निर्धारण करता है, इन प्रश्नों पर विचार किया गया है। व्यवस्था परिवर्तन, जिसमें पहले तदर्थ खजाना बिल को बंद करते हुए स्वचालित मुद्रीकरण पर नियंत्रण किया गया था और बाद में राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) अधिनियम के अंतर्गत सरकार द्वारा प्राथमिक निर्गमों को अभिदान देने से रिज़र्व बैंक को रोकने से मौद्रिक नीति का राजकोषीय प्रभुत्व कम हुआ है, किन्तु समाप्त नहीं हुआ है। विशेष रूप से दमित मुद्रास्फीति, घाटों और एक दूसरे पर मुद्रास्फीति पोषण (फीडिंग) के कारण प्रभुत्व के नये रूप उभर आए हैं। बड़े राजकोषीय घाटों के कर्ज घाटा गति सिद्धांत संभाव्य रूप से व्यापक अर्थ में मुद्रीकरण के कारण बन सकते हैं। यह इस वजह से कि रिज़र्व बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की निवल खरीद के मामले में खुला बाजार परिचालन आरक्षित मुद्रा का निर्माण करते हैं। क्या इस प्रकार का मुद्रीकरण मौद्रिक नीति प्रभावोत्पादकता को कम करता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि क्या खुला बाजार परिचालनों का मौद्रिक नीति उद्देश्यों के साथ मतभेद है। व्यवहार में, यह निश्चय करना हमेशा आसान नहीं होता है कि खुला बाजार परिचालनों का कौन सा भाग चलनिधि अथवा मौद्रिक स्थितियों को प्रभावित करता है और खुला बाजार परिचालनों के कौन से भाग की वजह से कर्ज निलामियां होती हैं। पिछले आठ वर्षों (2004-05 से 2012 -13) में सरकारी बाजार उधारों में लगभग दस गुना वृद्धि हुई है। इस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक ने भारी मात्रा में खुला बाजार परिचालन खरीद का संचालन किया था। जब तक राजकोषीय घाटा भारी रहेगा, राजकोषीय नीति प्रभुत्व के बने रहने की संभावना है। जिस सीमा तक खुला बाजार परिचालन रिज़र्व बैंक के मौद्रिक विस्तार लक्ष्यों को प्रभावित नहीं करते हैं, राजकोषीय प्रभुत्व मौन हो जाता है। किन्तु, जब मुद्रास्फीति तत्वों के अनुरूप, सीमा से अधिक खुला बाजार परिचालनों के माध्यम से प्रणाली में अतिरिक्त चलनिधि का संचार किया जाता है तो राजकोषीय प्रभुत्व मौद्रिक स्थिरता के लिए अहितकर बन जाता है। वह मौद्रिक नीति परिचालनों का अतिक्रमण कर सकता है, क्योंकि वह गेम ऑफ चिकन के लिए एक खेल-सैद्धान्तिक सेटिंग उपलब्ध कराता है।

1.9 भारी मात्रा में राजकोषीय घाटों ने भारत में मुद्रास्फीति को अनेक प्रकार से प्रभावित किया है। प्रथम, उस सीमा तक कि ये घाटे अर्थव्यवस्था में कीमत अनम्यता को परिलक्षित कराते हैं जिसकी वजह से कीमतें प्रशासनिक तौर पर तय की जाती हैं - जैसे कि ऊर्जा कीमतें, अर्थात् डीज़ल, बिजली, कोयला अथवा उर्वरक की कीमत- वे संभाव्य रूप से मुद्रास्फीतिकारक रहती हैं, तथापि अल्पावधि में उनका परिणाम दमित मुद्रास्फीति के रूप में होता है। इस प्रकार की कीमतों में अक्सर अचानक भारी संशोधन करने की आवश्यकता होती है जब सब्सिडी युक्त खर्चों के कारण एक अस्थिर राजकोषीय स्थिति निर्मित हो जाती है। इन असतत परिवर्तनों से न केवल मुद्रास्फीति बढ़ती है किन्तु इनका प्रभाव मुद्रास्फीति अपेक्षाओं पर भी पड़ता है। द्वितीय, भारी राजकोषीय घाटों का उपयोग जब पूंजी खर्च के बजाय चालू खर्चों के वित्तपोषण में किया जाता है तो वह निवेश को प्रभावित करता है और आपूर्ति अनुक्रियाओं में विलंब होता है जो मध्यावधि मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक है। वे संभावित उत्पादन को भी कम करते हैं जिससे मौद्रिक नीति को सरल बनाना अधिक कठिन हो जाता है। तृतीय, बाजार उधारों से बड़े राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण से ब्याज दरों पर उसके प्रभाव तथा अर्थव्यवस्था में साख की उपलब्धता के परिणामस्वरूप निजी निवेश

की भरमार हो जाती है। इससे आवश्यक आपूर्ति अनुक्रियाएं और धीमी हो जाती हैं। चतुर्थ, रिज़र्व बैंक के पास जमा सरकारी नकदी शेष में वृद्धि से कभी-कभी भारी राजकोषीय घाटे की अनुक्रिया में चलनिधि की स्थिति काफी तंग हो जाती है। यदि यह खुला बाजार परिचालन खरीद के साथ होता है तो जो मौद्रिक प्रभाव होगा वह स्फीतिकारक हो सकता है। वेक्टर एरर करेक्शन मॉडल (वी ई सी एम) इस्तेमाल करते हुए इस अध्याय में जो प्रायोगिक कार्य प्रस्तुत किया गया है, वह यह दर्शाता है कि मुद्रास्फीति का दीर्घावधि प्रभाव सरकारी राजस्व पर की तुलना में सरकारी खर्च पर कहीं अधिक होता है। उच्च मुद्रास्फीति से उच्चतर सरकारी खर्च की स्थिति बन सकती है, जिससे उच्चतर मुद्रास्फीति होने के परिणाम स्वरूप एक स्वतः स्थाइत्व चक्र बन सकता है।

1.10 राजकोषीय नीति की एक महत्वपूर्ण प्रतिचक्रीय भूमिका होती है जिसे महा मंदी की स्थिति में कीन्स द्वारा अनुशंसित करने के बाद देखा-परखा गया और व्यवहार में लाया गया है। हालांकि, उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के मामले में सरकारी खर्च अक्सर यथाचक्रीय पाये जाते हैं। यथाचक्रीय राजकोषीय नीति का आशय यह होता है कि तेजी के समय में राजकोषीय नीति विस्तारकारी होती है और मंदी के समय वह संकुचनकारी होती है। राजकोषीय नीति का आदर्श लक्ष्य यह होना चाहिए कि वह चक्रीय मंदी के दौरान, जब राजस्व कम हो जाते हैं और 'सामाजिक' खर्च बढ़ जाते हैं, अधिक उधार ले और तेजी के दौरान कर्ज को घटाए। राजकोषीय नीति को इस बात का प्रयास करना चाहिए कि वह कारोबार चक्र उतार-चढ़ावों को धीमा करे, विशेष रूप से तब, जब कर-आधार पर अथवा खर्च पर झटके अस्थायी हो अर्थात् स्थायी न हो। ऐसा प्रायः नहीं होता है। इन सबसे समष्टि आर्थिक अस्थिरता, निवेशों में मंदी बढ़ती है, संवृद्धि में कमी होती है, आय और धन संपदा का पुनः वितरण गरीबों से दूर हो जाता है तथा अर्थव्यवस्था में कल्याण का सामान्य स्तर घट जाता है। इससे भारी घाटा पूर्वग्रह उत्पन्न होता है एवं कर्ज-स्थायीत्व एवं चूक का जोखिम उपस्थित हो जाता है। दीर्घावधि (1950-51 से 2011-12 तक) के लिए इस अध्याय में प्रस्तुत प्रायोगिक साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि भारत में राजकोषीय खर्च, दीर्घावधि और अल्पावधि- दोनों में ही यथाचक्रीय है। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि सरकार के अंतिम उपभोग प्रायः स्फीतिकारक रहे हैं, कुल मांग में चक्रीय उतार-चढ़ावों को नियंत्रित करने में उसकी अपनी सीमाएं हैं। इससे मौद्रिक नीति पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है। किन्तु, वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान 2008-09 में प्रतिचक्रीय राजकोषीय विस्तार का उत्तरदायित्व लिया गया था।

1.11 कर्ज-घाटा गतिसिद्धांत की मौद्रिक नीति के साथ अनेक प्रकार से पारस्परिक क्रिया होती है। सरकार उसके खर्चों का वित्तपोषण या तो कर के माध्यम से कर सकती है अथवा करेतर राजस्व के माध्यम से अथवा चल रहे घाटों द्वारा कर सकती है, जिनका वित्तपोषण कर्ज के माध्यम से किया जाता है। जिस तरीके से कर्ज उगाहे जाते हैं उसका भी संबंध मौद्रिक नीति से होता है। इसके अलावा, कर्ज वित्तपोषण का प्रभाव भावी राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों पर भी पड़ता है। उसका प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि बैरो-रिकार्डो तुल्यता है अथवा नहीं, जिसके अनुसार अपेक्षित है कि कर्ज का वित्तपोषण भावी कर और करेतर राजस्व, धारित राशियों (होल्ड) से किया जाना चाहिए। यदि कर्ज भावी राजस्व धारा में पर्याप्त रूप से नहीं जुड़ पाता है तो भावी जिम्मेवारियों को पूरा करना कठिन हो सकता है। एक स्वतः प्रतिगामी वितरित अंतराल (ए आर डी एल) मॉडल का प्रयोग करते हुए, घाटा, कर्ज और मुद्रा के बीच संबंध के गति सिद्धांत का प्रायोगिक तौर पर विश्लेषण करते हुए उक्त अध्याय में इस बात को दर्शाया गया है कि केंद्र और राज्यों के संयुक्त सरकारी कर्ज और आरक्षित मुद्रा में परिवर्तन के बीच दीर्घावधि सह-संपूर्ण संबंध है।

पिछले वर्षों में राजकोषीय प्रभुत्व ने किस प्रकार रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र को प्रभावित किया? क्या प्रत्यक्ष राजकोषीय दबावों और भारतीय अर्थव्यवस्थाओं में बढ़ते हुए बाह्य खुलेपन से तुलन पत्र प्रबंधन में रिज़र्व बैंक की स्वायत्तता प्रभावित हुई है? संकट के प्रति नीति अनुक्रिया का रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर क्या प्रभाव पड़ा था?

1.12 अध्याय 4, 'राजकोषीय परिचालन और रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र' बदलते हुए राजकोषीय-मौद्रिक गति सिद्धांतों के संदर्भ में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में मोड़ बिंदुओं का पता लगाने का प्रयास करते हुए इन मुद्दों पर विचार किया गया है। ऐतिहासिक रूप से, सामाजिक नियंत्रण (1968-1990) की अवधि के दौरान भारत में राजकोषीय प्रभुत्व की मौजूदगी थी। सरकार के बैंकर के तौर पर, सुधार-पूर्व काल के दौरान रिज़र्व बैंक के लिए योजना प्रक्रिया में सरकार के संसाधन अंतराल को भरने का एक महत्वपूर्ण विकास लक्ष्य था। इस चरण के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार उल्लेखनीय रूप से बढ़ गया जो सरकार के प्रति इसके बढ़ते हुए

निभाव और अनुवर्ती मुद्रास्फीति पर नियंत्रण पाने के लिए उसके मौद्रिक नीति साधनों के इस्तेमाल को दर्शाता है। 1980 के वर्षों के दौरान राजकोषीय स्थितियां काफी बिगड़ गई थी, जिनकी वजह से राजकोषीय घाटे का मुद्रीकरण करना पड़ा और जिसके परिणामस्वरूप 1990-91 में भुगतान संतुलन का संकट खड़ा हो गया।

1.13 अर्थव्यवस्था के खुल जाने के पश्चात् विदेशी मुद्रा भंडार में अभिवृद्धि के मौद्रिक प्रभाव को निष्प्रभावी करने के लिए बैंकों की आरक्षित निधि अपेक्षाओं में वृद्धि की वजह से 1990 के वर्षों के पूर्वार्ध के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का आकार विस्तार जारी रहा। सुधार के बाद की अवधि को राजकोषीय प्रभुत्व के मन्दन की ओर धीरे-धीरे खिसकने के रूप में देखा गया है, जिसके परिणामस्वरूप रिज़र्व बैंक को मौद्रिक नीति संचालन में अत्यन्त लचीलापन प्राप्त हो गया है जैसा कि अधिक बाजारोन्मुख मौद्रिक नीति संचालन क्रियाविधियों की ओर बढ़ने के माध्यम से दर्शाया गया है। अप्रैल 1997 से तदर्थ खजाना बिलों को बंद करने के माध्यम से सरकारी घाटे के स्वतः मुद्रीकरण के बंद होने और उसके साथ ही सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास से रिज़र्व बैंक धीरे-धीरे आरक्षित नकदी निधि अनुपात (सी आर आर) कम कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप 1990 के वर्षों के द्वितीयार्ध के दौरान तुलन पत्र का आकार छोटा हो गया।

1.14 बाज़ार आधारित सरकारी उधारी कार्यक्रम के उभरने, प्राथमिक सरकारी प्रतिभूतियां जारी करने में रिज़र्व बैंक की भूमिका समाप्त हो जाने, विभिन्न दीर्घावधि निधियों में उसके अंशदान में भारी कमी होने तथा केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र और राजकोषीय नीतियों के बीच अंतरापृष्ठ में एक नव युग की शुरूआत हुई। 2001 और 2007 के बीच रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र के आकार में वृद्धि हुई, जिसमें विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप करते हुए देशी अर्थव्यवस्थाओं पर भारी पूंजी प्रवाहों के अस्थिरतापूर्ण प्रभावों को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा किये गये प्रयास परिलक्षित होते हैं। पूंजी आगमन में वृद्धि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में एक नया आयाम जोड़ती है, क्योंकि रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर निवल देशी आस्तियों में कमी के समीप ही निवल विदेशी आस्तियां संचित हो गई थी। बाजार स्थिरीकरण योजना लागू किया जाना राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकरणों के बीच अंतरापृष्ठ में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर था जिसके अंतर्गत अवरुद्धता प्रयोजनों के लिए सरकारी प्रतिभूतियां जारी की गई थी, जिसके साथ राजकोष द्वारा भी अवरुद्धता की लागत का अंश वहन किया गया था। 2008 में वैश्विक वित्तीय संकट के प्रारंभ के बाद स्थिति में बदलाव आया जिसके अंतर्गत पूंजी प्रवाह में उलटाव हुआ। यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि वैश्विक वित्तीय संकट के दौरान अनेक केंद्रीय बैंकों की गैर-परंपरागत मौद्रिक नीतियों और मात्रात्मक सुलभता उपायों के परिणामस्वरूप उनके तुलन पत्र के विस्तार के विपरीत रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र के विस्तार के विपरीत रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र 2008-09 में, परंपरागत और गैर-परंपरागत उपायों के व्यापक उपयोग के बावजूद संकुचित था। आस्ति की ओर, विनिमय दरों के स्थिरीकरण के लिए विदेशी आस्तियों में कमी करते हुए प्रतिसंतुलन की तुलना में खुला बाजार परिचालनों और चलनिधि निभाव के माध्यम से देशी आस्तियों का विस्तार अधिक था। देयता की ओर, आरक्षित नकदी निधि अनुपात में कमी और बाजार स्थिरीकरण योजना जमा राशियों के मोचन के कारण बैंक आरक्षित निधियों और सरकारी जमाराशियों मे गिरावट के कारण तुलन पत्र संकुचित हो गया। उसके बाद से रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में उल्लेखनीय रूप से विस्तार हुआ, जिसमें उसके चलनिधि प्रबंध परिचालन परिलक्षित हुए, जिनका उद्देश्य, सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम को समर्थन देते हुए और साथ-साथ मुद्रास्फीति को नियंत्रण में लाकर वसूली प्रक्रिया को मजबूत बनाना है।

वैश्विक अनिश्चितताओं, बारहवीं पंचवर्षीय योजना के दस्तावेज में परिकल्पित संवृद्धि लक्ष्य को प्राप्त करने की अनिवार्यताओं, भारत सरकार द्वारा अक्तूबर 2012 में निर्धारित राजकोषीय रोड मैप और नकदी तथा कर्ज प्रबंध के संचालन में संस्थागत व्यवस्थाओं में प्रस्तावित परिवर्तन को ध्यान में रखते हुए हम भारत में राजकोषीय- मौद्रिक कर्ज प्रबंध समन्वय के दृष्टिकोण को किस रूप में देखते हैं ?

1.15 केंद्र सरकार को नियम-आधारित राजकोषीय समेकन की राह पर लौटने की आवश्यकता होगी क्योंकि उसका राजकोषीय घाटा-सकल देशी उत्पाद अनुपात 2008-09 से सामान्यतया उच्च स्तर पर बना हुआ है। बारहवी योजना (2012-13 से 2016-17) दस्तावेज में औसत लक्षित संवृद्धि दर 8.0 प्रतिशत निर्धारित की गई है और 2011-12 की बचत दर की तुलना में, इसके साथ ही, सार्वजनिक क्षेत्र बचत दर में लगभग 3.5 प्रतिशत की बढ़ोतरी का अनुमान लगाया गया है। मध्य-सितंबर 2012 से शुरूआत करते हुए भारत सरकार ने राजकोषीय घाटे पर काबू पाने तथा निवेश वातावरण में सुधार लाने के लिए अनेक उपायों की घोषणा की है। अक्तूबर 2012 के अंत में वित्त मंत्री ने सरकार के इस निर्णय

की घोषणा की कि बारहवी पंचवर्षीय योजना के दौरान राजकोषीय समेकन योजना अपनाई जाएगी जिसके अंतर्गत राजकोषीय घाटे को क्रमशः कम करते हुए 2012-13 में जी डी पी के 5.3 प्रतिशत से 2016-17 में जी डी पी के 3.0 प्रतिशत पर ले आया जायगा। इसके अलावा, सरकार अपनी सीमा के भीतर एक कर्ज प्रबंध कार्यालय स्थापित करने जा रही है जिससे भारत में नकदी और सार्वजनिक कर्ज प्रबंध में संस्थागत परिवर्तन हो सकता है जो रिज़र्व बैंक की सीमा में आएगा। तद्नुसार अध्याय 5, 'राजकोषीय मौद्रिक नीति समन्वय और सरकारी कर्ज और नकदी प्रबंध' के लिए संस्थागत व्यवस्थाएं- एक मध्यावधि दृष्टिकोण; सुधार के पश्चात् की अवधि में राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के बीच संबंध का निर्धारण करता है। इस संदर्भ में एक अनुभवजन्य प्रयोग द्वारा मांग दर के साथ एक अनुक्रमिक कार्य का अनुमान लगाया गया है- जो मौद्रिक नीति का परिचालन लक्ष्य है और मौद्रिक नीति दर के लिए सामान्यतया परोक्षी के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है- आश्रित परिवर्ती और मुद्रास्फीति अंतराल (अर्थात, थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर और उसके प्रवृत्ति घटक के बीच अन्तर), उत्पादन अंतराल (अर्थात् डी-टेंडेड अथवा सकल देशी उत्पाद के चक्रीय घटक) सकल देशी उत्पाद में केंद्र के राजकोषीय घाटे का अनुपात (एक-अवधि अंतराल के साथ) और व्याख्यात्मक परिवर्ती के रूप में एक-अवधि अंतराल मांग दर। अनुमानित समीकरण राजकोषीय घाटे के विकसित होते हुए पथ के निहितार्थ, उत्पादन अंतराल और मध्यावधि में मौद्रिक नीति के लिए मुद्रास्फीति अंतराल के संबंध में व्यापक दिशा-निर्देश उपलब्ध कराता है।

1.16 इस अध्याय में कर्ज प्रबंधन के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं के संबंध में भी बहस अथवा पुनर्विचार पर सार प्रस्तुत किया गया है जो वैश्विक वित्तीय संकट से उत्पन्न हुआ था। भारत में, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार में पहले ही एक मध्यस्थ कार्यालय की स्थापना की जा चुकी है और रिज़र्व बैंक से भारत सरकार को कर्ज और नकदी प्रबंधन कार्यों के हस्तांतरण को पूरा करने के लिए भारतीय सार्वजनिक कर्ज प्रबंध एजेंसी के संबंध में एक बिल पेश करने का प्रस्ताव विचाराधीन है। इसके बावजूद, हाल के वित्तीय संकट से प्राप्त अंतर्राष्ट्रीय अनुभव को ध्यान में रखते हुए कि वह कर्ज प्रबंधन, मौद्रिक प्रबंध और वित्तीय स्थिरता बनाये रखने के साथ ही साथ भारत में विशिष्ट परिस्थितियों पर हावी रहेगा, इस अध्याय में ऐसे कुछ मुद्दों पर विशेष रूप से विचार किया गया है जो इस संबंध में एक अलग दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता पर बल देते हैं।